ईंट भी पानी पीती है

दिलीप चुघ

कक्षा के बाहर बच्चों के साथ टहलते हुए पढ़ाई की जाए तो बातों-ही-बातों में कई नए आयाम खुद-ब-खुद खुल जाते हैं। ऐसा ही एक अनुभव यहां दिया जा रहा है जिसमें बच्चों को अपनी बात कहने की पूरी आज़ादी थी - तभी तो बच्चे ने तर्क सहित बताया कि ईंट भी पानी पीती है।

सरकारी व अन्य विद्यालयों के अवलोकन सदैव ही इस तथ्य की पुष्टि करते नज़र आते हैं कि निरन्तर चलने वाला 'कमराबन्द' शिक्षण बच्चों में शिक्षण के प्रति एक उदासीनता पैदा करता है। हमारी शैक्षणिक गतिविधियों के दायरे में सुव्यवस्थित कमरा, श्यामपट्ट, किताबें, कॉपियां व कुछ अन्य लिखित-सुसज्जित सामग्री ही सम्मिलित की जाती रही है। इनके अभाव में किसी शैक्षणिक गतिविधि की कल्पना करना शिक्षकों के लिए संभव ही नहीं हो पाता है। यद्यपि बहुत-से शिक्षाविदों ने प्रकृति शिक्षण को कमराबन्द शिक्षण के विकल्प के रूप में महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

कभी इस बारे में शिक्षकों से बात करने पर अक्सर यही सुनने मिलता है कि बच्चों को कहां ले जाया जाए? आसपास कोई 'जगह' ही नहीं है। उनकी इस 'जगह' शब्द की अवधारणा में सुन्दर बाग-बगीचे, सुरम्य प्राकृतिक स्थल, बांध, नदियां, यही सब आते हैं। क्या इन सब से परे गांव-गलियां, खेत, टेकड़ियां, आसपास का जीव-जगत आदि प्रकृति शिक्षण के दायरे से बाहर की चीज़ें हैं? क्यों ऐसी कोशिश नहीं की जाती ताकि बच्चों की अपने परिवेश संबंधी जानकारी और अनुभव को ही पर्यावरण विषय की अवधारणाओं को सिखाने का आधार बनाया जा सके।

भ्रमण और बातचीत

मैंने कुछ इसी तरह के सवालों के जवाब ढूंढ़ने व नए अनुभवों से गुज़रने की ललक में बच्चों के साथ सजीव-निर्जीव की अवधारणा पर 'भ्रमण चर्चा' द्वारा कुछ काम कराने का प्रयास किया। इस कोशिश में मिले नए अनुभव मेरे लिए अविस्मरणीय हैं, साथ ही वे उपरोक्त

सवालों को एक दिशा देते हुए भी प्रतीत होते हैं।

बच्चों के साथ बातचीत का सिलसिला एक सामूहिक चर्चा से शुरू किया। पहले बच्चों के साथ भैंस व पत्थर में दिखने वाले अन्तरों पर चर्चा की। बातचीत में बच्चों ने बताया, भैंस बड़ी है, चलती है, न्यार (चारा) चरती है, दूध देती है, पड्डी (बच्चा) देती है, हुंसास (श्वास) लेती है। पत्थर न हिलता है न कुछ करता है, हमेशा पड़ा रहता है।

अब भैंस के उदाहरण द्वारा रेखांकित विशेषताओं पर बातचीत की और इससे मिलती-जुलती विशेषता वाले कुछ और जीवों के नाम पूछे। बच्चों ने कुत्ता, बिल्ली, गाय, आदमी आदि गिनवाए और फिर पत्थर की तरह बोर्ड, पेंसिल, कॉपी, किताब बताए। इस तरह भैंस वाले कॉलम में आए नामों को सजीव तथा पत्थर वाले कॉलम में आए नामों को निर्जीव बताया।

अब हम सबने तय किया कि पूरे गांव का एक चक्कर लगाएंगे और आसपास दिखने वाली चीज़ों के बारे में मिलकर बातचीत करेंगे कि वे सजीव हैं या निर्जीव। बस, एक छोटा-सा नियम होगा कि जिस भी बच्चे को किसी भी चीज़ के बारे में बात करनी हो, पहले या तो वह चीज़ लाए या फिर उसकी तरफ इशारा करे, फिर सभी मिलकर चर्चा करेंगे कि वह सजीव है या निर्जीव।

यह भ्रमण-चर्चा काफी रोचक रही। कुछ बच्चियां रास्ते में पड़ी चीज़ें -- पन्नी, कागज़, ठिक्कर, लकड़ी के टुकड़े आदि उठाकर लाईं और उन पर चर्चा शुरू हो गई। बीच-बीच में भैंस व पत्थर की चिन्हित विशेषताओं से उनकी विशेषताओं का मिलान किया गया और फिर तय किया गया कि वह सजीव है या निर्जीव।

इस भ्रमण चर्चा में दो उदाहरण काफी रोचक रहे। इन दो उदाहरणों से मैं स्पष्ट करना चाहूंगा कि चर्चा किस प्रकार चली और उसमें बच्चों की सहभागिता कैसी रही।

घूमते हुए मेरी नज़र अचानक एक चींटे पर पड़ी। मैंने उसे पकड़ लिया और चींटे पर हमारी चर्चा कुछ यूं शुरू हुई - "बताओ यह सजीव है या निर्जीव?"

ज़्यादातर बच्चे बोले, "सजीव।"

मैंने पूछा, "क्यों भई?"

जन्नी बोली, "ये चलता है।"

रुबीना बोली, "ये चीनी-गुड़ खाता है।"

सहरुला बोली, "ये काट भी खाता है।"

मैंने सजीवों की महत्वपूर्ण विशेषता की ओर ध्यान दिलाने की कोशिश की और पूछा, "क्या ये बच्चे भी देता है?"

सभी ने एक साथ कहा, "नहीं।"

मैंने फिर पूछा, "तो क्या ये अंडे देता है?"

सभी ने फिर एक साथ कहा, "नहीं देता।"

मैं थोड़ा सकपकाया फिर भी धीरे से पूछ लिया, "क्या तुमने कभी इन्हें सफेद-सफेद छोटी चीज़ें कतार में ले जाते हुए देखा है? या फिर कभी किसी बड़े पत्थर को हटाने पर इनके बिलों में यही चीज़ें देखी हैं?" बच्चे कुछ सुनने को तैयार नहीं थे। रुखसाना थोड़ी दूर खड़ी होकर मेरी शक्ल देखकर हंसने लगी और बोली, "सर जी, ये अंडे नहीं देता, अंडे तो चींटी देती है।" मुझे स्वयं पर हंसी आई। मुझे यह बात सूझी ही नहीं कि बच्चों का इशारा मादा की ओर है।*

ईंट पानी पीती है!

आगे बढ़े तो आसूबी ने एक ईंट की ओर इशारा किया। कुछ बच्चे उसे सजीव बताने लगे। मैंने फिर से सवालात किए।

"क्या ये चलती है?"

"नहीं।"

"क्या ये कुछ खाती है?"

"नहीं।"

"क्या ये हुंसास (श्वास) लेती है?"

"नहीं।"

"क्या ये कुछ पीती है?"

मैं 'नहीं' जवाब की अपेक्षा में निश्चिन्त खड़ा था। लेकिन ज़्यादातर बच्चे बोले, "हां, ईंट पानी पीती है।" मुझे फिर से सकपकाहट हुई। लेकिन प्रश्नों का सिलसिला जारी रखा।

** चींटीं, चींटे या मकोड़े की मादा नहीं होती यह स्पष्ट करने के लिए हम इस लेख के साथ ही संदर्भ के इसी अंक में अरविंद गुप्ते का लेख दे रहे हैं। देखिए पृष्ठ 35 पर।*

"तुम पानी कब पीते हो?"

"हलक (गला) सूखने पर, मिर्च लगने पर, या रोटी खाने के बाद।"

"प्यास लगने पर क्या करते हो?"

"उठकर मटके से पानी पी लेते हैं।"

"क्या ईंट भी ऐसा ही करती है? हमें देखना होगा कि ईंट के पानी पीने व किसी सजीव के पानी पीने में कितना अन्तर है।"

सही मायने में तो यह भ्रमण चर्चा सजीव-निर्जीव की अवधारणा पर किया गया संवाद मात्र है जिसे सामान्यतः कक्षा में चित्रों, ब्लैक-बोर्ड और कुछ उदाहरणों के मार्फत भी समझाया जा सकता था। लेकिन फिर भी घूमते हुए इस तरह से चर्चा करना बच्चों के लिए व मेरे लिए भी एक नया अनुभव रहा। यहां बंद कक्षा से फर्क माहौल था, बच्चों को बेहद मज़ा आया। साथ ही बच्चों को बोलने के भरपूर मौके मिले।

शिक्षकों को बच्चों के साथ चर्चा के दौरान यह खटका भी बना रहता है कि चर्चा के दौरान कहीं कोई ऐसा पहलू न खुल जाए जिसके बारे में बातचीत में शिक्षक को झिझक हो। जैसे चींटे की चर्चा को ही लेते हैं। कई शिक्षकों में यह भय रहता है कि नर-मादा जैसी अवधारणाओं या इनके वर्गीकरण के आधारों पर बातचीत करते समय ऐसी बातें न होने लग जाएं जिन्हें हमारे समाज में वर्जित माना जाता है। मुझे लगता है कि बच्चे अपने परिवेश व समाज से सीखते हुए इन सभी बातों की जानकारी रखते हैं। ये बातें उनके लिए बिलकुल भी अजीब नहीं होती, इनको तो वयस्क समाज द्वारा अजीब-सा व बेढंगा बना दिया जाता है।

ईंट वाले उदाहरण से भी एक बात उभरती है कि बच्चों से बातचीत के दौरान बच्चों को अपनी बात कहने व तर्क देने के मौके प्रदान करने पर बातचीत को नए आयाम मिलते हैं। वैसे आमतौर पर बच्चों को बोलने का मौका ही बहुत कम दिया जाता है; और अगर कहीं दिया भी जाता है तो चर्चा को पूर्व-निर्धारित दिशा में बनाए रखने की कोशिश की जाती है। इस प्रयास में बच्चों से बहुत कम प्रश्न किए जाते हैं या शिक्षकों द्वारा पहले से सोचे सवाल ही दागे जाते हैं।

एक बार फिर ईंट द्वारा पानी पीने की बात पर आएं तो बच्चों का यह कहना ठीक था कि ईंट पानी पीती है क्योंकि बच्चों के द्वारा कही गई यह बात ईंट की पानी सोखने की विशेषता को लेकर उनके आसपास के लोगों द्वारा किए गए संवाद पर आधारित थी। अतः ऐसे समय में चर्चा को और गहराई में ले जाने की आवश्यकता होती है, न कि अपनी बात बच्चों पर थोपने की।

दिलीप चुघः अलवर (राजस्थान) की इब्तिदा संस्था से संबद्ध। यह लेख बच्चों के साथ पर्यावरण पर करवाए गए कार्य पर आधारित है।

सभी चित्रः प्रीति निगमः शौकिया चित्रकार, भोपाल में निवास।